महाकाव्य रघुवंश (प्रथम सर्ग)

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।

जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ ।।1।।

अन्वयः: (अहं कालिदासः) वागर्थप्रतिपत्तये वागर्थाविव सम्पृक्तौ जगतः पितरौ पार्वतीपरमेश्वरौ वन्दे।

अनुवादः शब्द और अर्थ को भली प्रकार समझने के लिए मैं (कालिदास) शब्द और अर्थ की तरह नित्य सम्बद्ध (एकरूप) तथा संसार के माता-पिता पार्वती तथा भगवान् शंकर को प्रणाम करता हूं।

टिप्पणियां: संस्कृत काव्य शास्त्र के आचार्यों के अनुसार महाकाव्य का प्रारम्भ नमस्कार, आशीर्वाद अथवा वस्तुनिर्देशपूर्वक होना चाहिये- **''आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिर्देश एव वा।''** अतः रघुवंश महाकाव्य भगवान् शिव तथा भगवती पार्वती (जगत् के माता पिता) की वन्दना के साथ प्रारम्भ होता है:**''ग्रन्थारम्भे निर्विघ्नेन ग्रन्थपरिसमाप्तिकामः कविः मंगलाचरणम् करोति।''**

सम्पृक्तौ सम् उपसर्ग धातु पृच्+क्त, परस्पर जुड़े हुए, नित्य (अर्थात् अविच्छेद्य रूप से) सम्बद्ध

वागर्थाविव शब्द और उसके अर्थ के समान। वाक् च अर्थश्च वागर्थौ तौ इव। जिस प्रकार शब्द एवं अर्थ का नित्य सम्बन्ध है उसी प्रकार से भगवान् शंकर एवं भगवती पार्वती भी नित्य सम्बद्ध हैं।

शिव पार्वती के प्रतीक के माध्यम से कालिदास ने पुरुष-नारी के अभिन्न सम्बन्ध की महती कल्पना को उजागर किया है। सचमुच कालिदास उस भारतीय मनीषा के प्रतिनिधि व्याख्यता कवि हैं, जो उस अभिन्न इकाई को खोज पाने में समर्थ हुई है जो व्यक्ति-व्यक्ति के देहात्मक द्वैत को इंगित करने वाली इकाई से कहीं अधिक गहरी और अर्थवान् है। यहां हमें उस असाधारण पूर्णता की विशद् अवधारणा से साक्षात्कार होता है जो व्यक्तिगत अहम् की सीमाओं को लांघ कर एक दूसरे में अपनी सत्यता को प्राप्त करती है।

'अर्धांग' और 'अर्धनारीश्वर' की जिस कल्पना ने भारतीय कला में मूर्त्तता प्राप्त की, वह इसी सत्य का प्रमाण है। इसी अवधारणा के समानान्तर वैयाकरण-चिन्तक भर्तृहरि के ग्रन्थ वाक्यपदीयम् में 'शब्दब्रह्म' की दार्शनिक कल्पना हुई जिसने शब्द और अर्थ की अद्वैतता पर बल दिया। टीकाकार मल्लिनाथ के अनुसार 'वागर्थाविव' एक शब्द है। इस सन्दर्भ में उन्होंने निम्न उद्धरण भी अपनी टीका में अंकित किया है:

''इवेन सह समासो विभक्त्यलोपश्च पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वञ्चेति वक्तव्यम्।''
अव्ययीभाव समास, सम्पृक्तौ का विशेषण।

वागर्थप्रतिपत्तये शब्द और उसके अर्थ के सम्यक् ज्ञान के लिए। प्रतिपत्ति का अर्थ है: सम्यक् ज्ञान। प्रति उपसर्ग धातु पद्+क्तिन्। वाक् च अर्थश्च इति वागर्थौ (द्वन्द्व समास) वागर्थयोः प्रतिपत्तिः इति वागर्थप्रतिपत्तिः तस्यै (षष्ठी तत्पुरुष)।

पितरौ माता च पिता च पितरौ-(एकशेषद्वन्द्व)। सूत्र है: **''पिता मात्रा'' (मात्रा सहोक्तः पिता वा शिष्यते)** अर्थात् माता शब्द के साथ पितृ शब्द आये तो विकल्प से केवल पिता शेष रहता है। यहां पितरौ शब्द इस तथ्य का सूचक है कि शिव-पार्वती समस्त संसार के जनक, परम कारुणिक तथा इष्ट वस्तुओं के प्रदाता हैं (मल्लिनाथ)।

इस श्लोक में उपमा अलंकार है। इस श्लोक में शिव-शक्ति, श्यामतेज एवं गौरतेज की पारमार्थिक अभिन्नता का प्रतिपादन किया गया है। शक्ति के बिना शक्तिमान् की कल्पना भी असंभव है।